उपकार

हिंदी निबंध

सभी प्रतियोगिता परीक्षाओं के लिए

जैन एवं कुलश्रेष्ठ

उपकार

हिन्दी निबन्ध

[सभी प्रतियोगिता परीक्षाओं के लिए सारगर्भित, उपयोगी एवं महत्वपूर्ण निबन्धों का संग्रह]

लेखकगण
जैन, कुलश्रेष्ठ एवं डॉ. चतुर्वेदी

संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण

उपकार प्रकाशन, आगरा-2

Introducing Direct Shopping

Now you can purchase from our vast range of books and magazines at your convenience :

- Pay by Credit Card/Debit Card or Net Banking facility on our website *www.upkar.in* *OR*
- Send Money Order/Demand Draft of the print price of the book favouring 'Upkar Prakashan' payable at Agra. In case you do not know the price of the book, please send Money Order/Demand Draft of ₹ 100/- and we will send the books by VPP (Cash on delivery).

(Postage charges FREE for purchases above ₹ 100/-. For orders below ₹ 100/-, ₹ 20/- will be charged extra as postage)

© प्रकाशक

प्रकाशक

उपकार प्रकाशन

(An ISO 9001 : 2000 Company)

2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर (शाह सिनेमा के सामने), **आगरा**–282 002

फोन : 4053333, 2530966, 2531101; **फैक्स** : (0562) 4053330, 4031570

E-mail : care@upkar.in

Website : www.upkar.in

ब्रांच ऑफिस

4845, अन्सारी रोड, दरियागंज, **नई दिल्ली**–110 002
फोन : 011–23251844/66

1-8-1/B, आर. आर. कॉम्प्लेक्स (सुन्दरैया पार्क के पास, मनसा एन्क्लेव गेट के बगल में), बाग लिंगमपल्ली, **हैदराबाद**–500 044 (आ. प्र.)
फोन : 040–66753330

पीरमोहनी चौक, कदमकुआँ
पटना–800 003
मो. : 9334137572

- *इस पुस्तक को प्रकाशित करने में प्रकाशक द्वारा पूर्ण सावधानी बरती गई है, फिर भी किसी त्रुटि के लिए प्रकाशक जिम्मेदार नहीं होगा.*
- *इस पुस्तक को अथवा इसके किसी अंश को बिना प्रकाशक की लिखित अनुमति के, किसी भी रूप–फोटोग्राफी, विद्युत-ग्राफिक, यान्त्रिकी अथवा अन्य रूप में किसी भी प्रकार से उपयोग के लिए, नहीं छापा जा सकता है.*
- *किसी भी परिवाद के लिए न्यायिक क्षेत्र केवल आगरा ही होगा.*

ISBN : 978-81-7482-111-9

मूल्य : ₹ 120.00 मात्र
(Rs. One Hundred Twenty Only)

Code No. 117

मुद्रक : उपकार प्रकाशन (प्रिंटिंग यूनिट) बाई-पास, आगरा

अपनी बात

'निबन्ध' की परिणति प्रबन्ध में हुई है. इसी कारण निबन्ध में भावात्मकता और वैचारिकता का समन्वय पाया जाता है, यह प्रायः आवश्यक भी माना जाता है. स्वच्छन्द भावधारा को चिन्तन की सीमाओं में रखना आजकल निबन्ध लेखक का दायित्व बन गया है. प्रस्तुत निबन्ध लिखते समय इसी दृष्टिकोण को सामने रखा गया है.

प्रायः प्रत्येक प्रतियोगितात्मक परीक्षा में 'निबन्ध' का एक प्रश्न-पत्र होता है अथवा निबन्ध सम्बन्धी प्रश्न अनिवार्य रहता है. अतः निबन्ध-लेखन के अभ्यास की आवश्यकता की चर्चा अनावश्यक है.

वर्तमान परिवेश और धरातलों का रूप बहुत व्यापक और विस्तृत हो गया है. तदनुसार निबन्धों के विषय भी वैविध्यपूर्ण एवं अभिनव होते जा रहे हैं. प्रस्तुत निबन्ध संग्रह इन समस्त आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है. बल इस बात पर रहा है कि प्रत्येक प्रतियोगिता में भाग लेने वाले परीक्षार्थी इसके द्वारा लाभान्वित हो सकें.

भाषा-शैली सर्वथा ऋजु, सरल एवं प्रांजल है. विषय-प्रतिपादन शैली के पीछे हमारे तीस वर्षों का अध्यापन एवं लेखन का अनुभव है. प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं में भाग लेने वाले अभ्यर्थियों के प्रति उपकार प्रकाशन आगरा की सेवाएं सर्वविदित हैं. इन निबन्धों का प्रकाश में आना उन्हीं के सहयोग द्वारा सम्भव हो सका है.

प्रस्तुत पुस्तक में साहित्य, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास, सभ्यता-संस्कृति, विज्ञान आदि समस्त परिवेशों को समाविष्ट किया गया है. कतिपय महत्वपूर्ण और प्रचलित सूक्तियों को भी निबन्ध रूप में पल्लवित किया गया है.

हमें पूर्ण विश्वास है कि उपकार प्रकाशन आगरा के अन्य प्रकाशनों की भाँति इस पुस्तक का भी सहृदय पाठकों द्वारा स्वागत होगा.

पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने की दृष्टि से जो भी सुझाव प्राप्त होंगे, उन्हें साभार स्वीकार किया जाएगा.

लेखकगण

जैन, कुलश्रेष्ठ एवं **डॉ. चतुर्वेदी**

प्रस्तुत संस्करण

'हिन्दी निबन्ध' का यह संस्करण प्रस्तुत करते हुए हम संतोष एवं प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं. सहृदय पाठकों की उदारता एवं गुण-ग्राहकता ने हमें बल प्रदान किया है.

स्थायी महत्व के निबन्धों को तथा प्रतियोगिता परीक्षाओं में आने वाले विषयों पर लिखे गए नए निबन्धों को समायोजित करके 'हिन्दी निबन्ध' को सर्वथा अभिनव एवं उपयोगी रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है, इसमें कई नवीन विषयों पर निबन्ध जोड़ दिए गए हैं. इस आशा के साथ कि विज्ञ पाठक इसके द्वारा लाभान्वित होंगे और पूर्व संस्करणों की भाँति इसका स्वागत करेंगे.

–लेखकगण

जैन, कुलश्रेष्ठ एवं **डॉ. चतुर्वेदी**

विषय-सूची

खण्ड I

सूक्ति आधारित निबन्ध

- ❒ मानव-जीवन कोरा स्वप्न नहीं..... 3–8
- ❒ यदि तुम शांति चाहते हो तो युद्ध के लिए तैयार रहो..... 9–11
- ❒ निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल..... 12–14
- ❒ कला, कला के लिए..... 15–17
- ❒ गरीबी एक अभिशाप है : क्रान्ति एवं अपराध की जननी है..... 18–20
- ❒ राजनीति का धर्म हो और धर्म की राजनीति न हो..... 21–24

खण्ड II

साहित्यिक निबन्ध

- ❒ अस्तित्ववाद..... 26–29
- ❒ नयी कविता..... 30–34
- ❒ लोक नाट्य *बनाम* नुक्कड़ नाटक..... 35–38
- ❒ तुलसी-साहित्य में सार्वभौम मूल्य और तुलसी की प्रासंगिकता..... 39–45
- ❒ राज भाषा की समस्या..... 46–50
- ❒ लोक साहित्य : स्वरूप और महत्व..... 51–54
- ❒ हिन्दी की बोलियाँ..... 55–58
- ❒ हिन्दी भाषा का उद्‌भव और विकास..... 59–64

खण्ड III

राजनीतिक निबन्ध

- ❒ भारत-चीन सम्बन्ध : सहयोग जनित प्रतिद्वन्द्विता..... 66–71
- ❒ भारत-पाक सम्बन्ध : शांति प्रक्रिया की नई पहल..... 72–75
- ❒ भारत के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध..... 76–79
- ❒ क्षेत्रीय राजनीति : समर्थन और विरोध..... 80–84
- ❒ देशप्रेम : स्वतन्त्रता पूर्व और स्वतन्त्रता बाद..... 85–88
- ❒ संसद और सर्वोच्च न्यायालय..... 89–92
- ❒ अपवित्र राजनीति नैतिक पतन के लिए जिम्मेदार है..... 93–96
- ❒ भारतीय लोकतंत्र में नौकरशाही की भूमिका..... 97–102

खण्ड IV
आर्थिक निबन्ध

- ❒ कृषि एवं ग्रामीण उद्योग 104–106
- ❒ वैश्वीकरण..... 107–109
- ❒ भारतीयों के विदेशों में जमा काले धन को किस प्रकार राष्ट्रीय कल्याण में वापस लाया जाए ?..... 110–112
- ❒ पंचायतों के आर्थिक स्वावलम्बन की दिशा में एक अभिनव प्रयोग : पंचायत उद्योग..... 113–115
- ❒ अति गरीबी की समस्याएँ..... 116–118
- ❒ औद्योगिक प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी..... 119–123
- ❒ उच्च शिक्षा का वाणिज्यीकरण..... 124–126
- ❒ ऊर्जा की बढ़ती माँग : समस्या और समाधान..... 127–130

खण्ड V
सामाजिक निबन्ध

- ❒ देश का निर्माण एवं युवा वर्ग 132–134
- ❒ आरक्षण..... 135–139
- ❒ हमारी जाति-प्रथा : परम्परा, अभिशाप और उन्मूलन
  अथवा
  भारतीय जातिवाद की समस्या..... 140–144
- ❒ प्रशासनिक सुधार : वर्तमान समय की आवश्यकता 145–152
- ❒ युवाओं में भटकाव : कारण और निवारण..... 153–155
- ❒ भारतीय समाज में नारी..... 156–158

खण्ड VI
समाजशास्त्रीय निबन्ध

- ❒ समान नागरिक संहिता में बाधक तत्व..... 160–162
- ❒ आतंकवाद *बनाम* धर्मयुद्ध..... 163–164
- ❒ आतंकवाद विश्वशान्ति का शत्रु नम्बर-1..... 165–167
- ❒ राजनीति का अपराधीकरण : कारण और निदान..... 168–171
- ❒ मानव जीवन में पशुओं की भागीदारी..... 172–176
- ❒ प्रतिभा-पलायन की समस्या..... 177–180
- ❒ पर्यावरण-प्रदूषण और निराकरण..... 181–185
- ❒ स्वतंत्रता एवं उसका दुरुपयोग..... 186–188
- ❒ विज्ञापन का महत्व..... 189–192

खण्ड VII

सांस्कृतिक निबन्ध

- ❒ भारत की सांस्कृतिक विरासत..... 194–197
- ❒ गांधीवाद और उसकी प्रासंगिकता..... 198–201
- ❒ संयुक्त राष्ट्र संघ : एक परिचय..... 202–208

खण्ड VIII

वैज्ञानिक निबन्ध

- ❒ जलवायु परिवर्तन पर विश्व की चिंताएँ..... 211–216
- ❒ कम्प्यूटर नेटवर्क के क्षेत्र में क्रान्ति : इंटरनेट.....217–220
- ❒ भारत में परमाणु ऊर्जा के बढ़ते कदम.....221–224

खण्ड IX

विविध निबन्ध

- ❒ भारत में कृषि का भविष्य..... 227–229
- ❒ सूचना पाने का अधिकार : जवाबदेहीयुक्त विकास की कुँजी 230–233
- ❒ देश की सुरक्षा..... 234–237
- ❒ भारत का भविष्य..... 238–240
- ❒ भारत में प्राकृतिक संसाधन और औद्योगिक विकास..... 241–245
- ❒ न्यायपालिका की सक्रियता क्या संवैधानिक अतिक्रमण है ?..... 246–251
- ❒ निजीकरण की ओर उच्च शिक्षा : चुनौतियाँ और सम्भावनाएँ..... 252–256

I
सूक्ति आधारित निबन्ध

मानव-जीवन कोरा स्वप्न नहीं

विषय-प्रवेश

मानव जीवन को लक्ष्य करके कवि कुलगुरु गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा है कि 'बड़े भाग मानुष तन पावा, सुर नर मुनि सद् ग्रन्थन गावा', क्योंकि मानव का शरीर साधन-धाम और मोक्ष का द्वार है. जीवन और जगत की दृष्टि से इतनी महत्वपूर्ण वस्तु को स्वप्न अथवा स्वप्नवत् कहना या समझना विधाता के प्रति अन्याय ही कहा जाएगा.

मानव जीवन स्वप्नवत् क्यों?

दर्शन की दृष्टि अनंत पर रहती है, वह अनंत के सापेक्ष्य में प्रत्येक वस्तु को नगण्य अथवा क्षणिक मानता है. दार्शनिक दृष्टि से वर्तमान का अस्तित्व सुरस्य धारा के समान होने के कारण अनुभवगम्य नहीं है. हम या तो अतीत में जीते हैं, अथवा भविष्य में रहते हैं. प्रस्तुत प्रत्येक क्षण अतीत बनता जाता है, भविष्य को हम वर्तमान बनाते रहते हैं. इसी प्रकार हमारे जीवन के आगे-पीछे मृत्यु का साम्राज्य रहता है. इस प्रकार मृत्यु के गर्भ में रहने वाले जीवन को अस्थायी कहना सर्वथा उचित है. साथ ही जीवन के बारे में यह भी नहीं कहा जा सकता है कि यह जीवन कब समाप्त हो जाए?

'सुबह होती है शाम होती है, उम्र यों ही तमाम होती है' की प्रक्रिया में रहने वाला मानव जब अंत समय को सामने देखता है, तब उसको ऐसा लगता है कि अरे, इतने वर्षों का समय इतनी जल्दी व्यतीत हो गया. इतने वर्षों पहले होने वाला बाल्यकाल कल जैसी घटना लगता है, आदि. सब कुछ सिनेमा की रील की भाँति आँखों के सामने घूम जाता है. ऐसा लगने लगता है कि सब कुछ एक स्वप्न था. जीवन के सुख-दुःखों की स्मृति स्वप्न के सुखद-दुःखद अनुभवों की भाँति शेष रह जाती है, परन्तु इसका यह अर्थ तो नहीं हो सकता है कि मानव-जीवन, मानव-जीवन ही क्यों, इस जगत के समस्त अनुभव, स्वप्न मात्र हैं. अधिक से अधिक हम यह कह सकते हैं कि जीवन में जाग्रतावस्था और स्वप्नावस्था दोनों अवस्थाएँ रहती हैं.

वस्तुस्थिति यह है कि न मानव स्वप्न है और न उसका जीवन स्वप्न है, स्वप्नवत् हैं– जगत् के प्रति उसके सम्बन्ध, क्योंकि ये सम्बन्ध स्वप्न की भाँति याहे जब टूट जाते हैं, समाप्त हो जाते हैं.

व्यावहारिक दृष्टि से जीवन और मानव-जीवन में कोई अंतर नहीं है. समस्त जीवन क्षण भंगुर है. यदि मानव जीवन स्वप्नवत् अथवा कोरा स्वप्न है, तो जीवन-मात्र स्वप्न कहा जाना चाहिए और तब उसकी चर्चा विचारणीय क्योंकर बन सकती है?

जीवन को मिथ्या अथवा स्वप्नवत् कहने-सुनने की परम्परा जगत्गुरु शंकराचार्य के इस सूत्र के साथ आरम्भ होती है–ब्रह्म सत्यम् जगन्मिथ्या. प्रश्न उठता है कि मिथ्या जगत के मिथ्या जीव का कथन क्योंकर सत्य होना चाहिए? अतः उक्त कथन अनेक वर्षों तक विवाद एवं चिन्तन का विषय बना रहा. लगभग 700-800 वर्षों बाद महाप्रभु

Publisher : Upkar Prakashan ISBN : 9788174821119 Author : Jain, Kulsrestha & Dr. Chaturwedi

Type the URL : http://www.kopykitab.com/product/3834

Get this eBook